प्रत्यक्ष प्रमाण के भेद

प्रत्यक्ष का विभाजन अनेक रूपों में न्याय दर्शन में किया गया है। पहला विभाजन दो वर्गों में हुआ है - लौकिक प्रत्यक्ष और अलौकिक प्रत्यक्ष।

(i) लौकिक प्रत्यक्ष → जब वस्तु का इन्द्रिय से साधारण संपर्क होता है तो उसे लौकिक प्रत्यक्ष कहते हैं।

लौकिक प्रत्यक्ष के भेद :- लौकिक प्रत्यक्ष का दो दृष्टिकोण से भेद किया गया है -

⇒ प्रथम दृष्टि से भेद → प्रथम दृष्टि से इसके दो भेद होते हैं - बाह्य प्रत्यक्ष और मानस प्रत्यक्ष।

(अ) बाह्य प्रत्यक्ष → पंचज्ञानेन्द्रियों अर्थात् आँख, कान, नाक, रसना और त्वचा द्वारा मिलने वाला बाह्य वस्तुओं का ज्ञान बाह्य प्रत्यक्ष कहलाता है। इसके पाँच (5) भेद हैं -

(i) चाक्षुष प्रत्यक्ष - जो आँखों से देखकर होता है।
(ii) श्रौत प्रत्यक्ष - जो कानों से सुनकर होता है।
(iii) घ्राणज प्रत्यक्ष - जो नाक से सूँघकर होता है।
(iv) स्पर्शज प्रत्यक्ष - जो त्वचा से छूकर होता है।
(v) रासन प्रत्यक्ष - जो जीभ से चखकर होता है।

(ब) मानस प्रत्यक्ष :→ इसे आन्तरिक प्रत्यक्ष भी कहा जाता है। चूँकि उपरोक्त पंच-ज्ञानेन्द्रियों के अलावा हमारी एक आन्तरिक इन्द्रिय भी होती है और वह है - मन। इस मन के द्वारा ही हमें सुख-दुःख, प्रेम, घृणा आदि का प्रत्यक्ष ज्ञान होता है। इस प्रकार यह मानस प्रत्यक्ष है। इसमें मन की अनुभूतियों का प्रत्यक्ष ज्ञान होता है।

⇒ द्वितीय दृष्टि से लौकिक प्रत्यक्ष का भेद — दूसरे दृष्टिकोण से लौकिक प्रत्यक्ष के तीन (3) भेद किये गये हैं— निर्विकल्पक, सविकल्पक और प्रत्यभिज्ञा।

(अ) निर्विकल्पक प्रत्यक्ष :→ निर्विकल्पक प्रत्यक्ष उसे कहते हैं, जिसमें विषय या वस्तु का केवल आभास होता है, उसका पूर्ण ज्ञान नहीं। अर्थात् इसमें विषय के रूप, गुण, आकार, प्रकार आदि का ज्ञान नहीं होता है। जैसे- दूर कहीं से किसी की आवाज आ रही है, तो हमें मात्र आवाज का आभास हो रहा है। वह किसकी आवाज है, किस जगह से आ रही है, आदि का ज्ञान नहीं हो पाता, तो यह निर्विकल्पक प्रत्यक्ष हुआ।

(ब) सविकल्पक प्रत्यक्ष :→ इसमें वस्तु का स्पष्ट और निश्चित ज्ञान होता है, न कि केवल आभास होता है। अर्थात् इसमें वस्तु के गुण, रूप, आकार, आदि का स्पष्ट ज्ञान होता है और स्पष्टतः जान लेते हैं कि अमुक वस्तु 'यह' है।

(स) प्रत्यभिज्ञा :→ 'प्रत्यभिज्ञा' का अर्थ है- पहचानना। कई बार प्रत्यक्षीकरण में हमें वस्तु के प्रत्यक्ष ज्ञान के साथ-ही-साथ यह ज्ञान भी होता है कि हमने इसे पहले भी देखा है, तो यह प्रत्याभिज्ञा है। जैसे- एक व्यक्ति का प्रत्यक्ष होने पर यह ज्ञान भी होना चाहिए कि इसे हमने पहले भी इसी स्थान पर देखा था; प्रत्याभिज्ञा है। इस प्रकार से इसमें इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त संवेदनाओं को 'पूर्व संस्कार' के द्वारा पहचाना जाता है। इसमें वर्तमान और भूत दोनों का समन्वय होता है।

Note: न्यायिकों के द्वारा किये गये प्रत्यक्ष के ये तीन भेद (निर्विकल्पक, सविकल्पक और प्रत्यभिज्ञा) को बौद्ध तथा अद्वैतवेदांती नहीं मानते।

—×—

(द). अलौकिक प्रत्यक्ष

अलौकिक प्रत्यक्ष में इन्द्रिय का संपर्क वस्तु या विषय से असाधारण ढंग से होता है। यह तीन (3) प्रकार का होता है- सामान्य लक्षण, ज्ञान लक्षण और योगज प्रत्यक्ष।

(i). सामान्य लक्षण प्रत्यक्ष:→ इस प्रत्यक्ष से तात्पर्य उस प्रत्यक्ष से है जिसमें हम वस्तु विशेष को देखकर उसकी 'जाति' का भी प्रत्यक्ष करते हैं। जैसे - किसी मनुष्य को देखकर यह ज्ञान भी होना कि यह 'मनुष्य जाति' का प्राणी है।

(ii). ज्ञान लक्षण प्रत्यक्ष:→ यह प्रत्यक्ष का वह रूप है, जिसके द्वारा ज्ञानेन्द्रियाँ अपने विषय का ज्ञान तो करती ही हैं, इसके अतिरिक्त अपने से भिन्न विषय का ज्ञान भी प्राप्त करती हैं। इसमें एक इन्द्रिय दूसरे विषय का अनुभव कर सकती है जो कि अतीत के अनुभव के आधार पर होता है। जैसे- आँख से हरी घास का प्रत्यक्ष करते हैं, किंतु उसे देखते ही कोमलता का भी अनुभव होता है। कोमलता का ज्ञान तो त्वचा के स्पर्श होने पर होता है। इसी कारण इसे ज्ञान लक्षण प्रत्यक्ष कहा जाता है। इसी तरह से पत्थर को देखकर ठोस का ज्ञान, फूल को देखते ही गंध का ज्ञान आदि।

(iii). योगज प्रत्यक्ष :→ योग सिद्धि के द्वारा योगियों को होने वाला 'योगज प्रत्यक्ष' भी एक प्रकार का अलौकिक प्रत्यक्ष है। इसमें योगी अपने योगाभ्यास से कुछ ऐसी शक्ति पा लेता है कि भूत तथा भविष्य की, दूरस्थ अथवा निकट की, अति सूक्ष्म या गूढ़ आदि किसी भी प्रकार की ज्ञान प्राप्त करता है। सामान्य मनुष्य को यह ज्ञान (प्रत्यक्ष) नहीं होता है।

—x—.